International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 736-739

पतित पावनी गंगा और प्रयाग

डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर, संस्कृत बीएसएनवी पीजी कॉलेज, लखनऊ यूनिवर्सिटी, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

गंगा का पवित्र जल पर्यावरण की दृष्टि से प्रधान है। हरिद्वार में गंगा, प्रयाग में गंगा। प्रयाग में दशश्वमेध यज्ञ कर ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की थी। हरिद्वार भी हरि का क्षेत्र। प्रयाग में द्वादश रूपों में विष्णु विद्यमान है। गंगा विष्णुपदी शिव की जटा तथा ब्रह्मा के कमण्डल में वास करने वाली है। दोनों क्षेत्रों में अत्यन्त सामंजस्य है। इसलिए अर्धकुम्भ की व्यवस्था दी गई। 'पर्व' का अर्थ गाँठ से है। ये पर्व सृष्टि के आदि और लय की गाँठ है। जो दृढ़ता प्रदान करते है। यदि यहाँ के गंगा जल का अध्ययन करें तो नासिक की गोदावरी तथा उज्जैन की शिप्रा से इसका जल कही अधिक भिन्न है।

गंगा जल को रखने के बाद भी इसके कीड़े नही पड़ते हैं और न ही दूषित होता है। हड्डियों को गला देने वाली क्षमता केवल इसी जल में है। हरिद्वार के ब्रह्मकुण्ड में लाखों कुन्तल हड्डियाँ डाली जाती है। महाभारत में गंगा जल को चन्द्रग्रहण व्रत से हजार गुना अधिक गुणकारी बताया गया है।

चन्द्रायण सहस्त्रेण यश्चरेत कायशोधनम।
यः पिबेद् वै यथेष्टन्तुगङ्गाम्भः स विशिष्यते।।

महर्षि चरक ने चरक संहिता में लिखा है–

हिमवत्प्रभवाः पथ्यः पुण्या देवर्षि सेविताः।[1]

पवित्र एवं देवताओ तथा ऋषियों द्वारा सेवित हिमालय से निकलने वाला गंगा जल पथ्य है। बाणभट्ट ने अपने अष्टांग हृदयम में लिखा है–

हिमवन्मलयोद्भूताः पथ्यस्ता एवं च स्थिराः।[2]

हिमालय से निकलने वाला गंगा जल पथ्य है और वह कभी दूषित होने वाला नही है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध वैज्ञानिक चक्रपाणिदत्त ने लिखा है–

यथोक्त लक्षण हिमालय –भवत्या देव गंगा पथ्यं।।

हिमालय से निकलने वाला स्वास्थ्य वृद्धि के लिए यथोक्त लक्षणों से युक्त होने के कारण गंगा जल पथ्य है। भण्डारकर ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट पूना में सुरक्षित 'भोजन कुतुल' नामक हस्तलिखित ग्रन्थ में लिखा है–

शीतं स्वादु स्वच्छमत्यन्तं रुच्य, पथ्य, पाचनं पापहारि।
तृष्णा मोह ध्वसनं दीपनं च प्रसादते वारि भागीरथीयम्।।

गंगा जल शीतल, स्वादिष्ट, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर पथ्य रोगी को देय योग्य पाचन शक्ति बढ़ाने वाला सब पापों का हरण करने वाला मोह का नाश करने वाला जठराग्नि को उद्दीप्त करने वाला क्षुधा और बुद्धि को बढ़ाने वाला हैं।

फ्रान्सीसी डाक्टर डी. हेरेल, प्रसिद्ध अमेरिकी लेखक ट्वेन वर्लिन जर्मनी के डा. जे. ओलिवर (1924में), डॉ. ई. एफ. के. हिमान ने (1931में) गंगा जल का परीक्षण वर्षो तक करने के बाद उपयोग में लाकर लिखा है कि गंगाजल में औषधि के सम्पूर्ण गुण विद्यमान यथावत मिले। इसमें हर प्रकार के कीटाणुओं को नष्ट करने की क्षमता है।

गंगा श्रद्धा–आस्था के साथ–साथ जीवन धारा क्यों? वह इसलिए कि यमुना और गंगा और दोनों के जल में कीटाणु नाशक क्षमता है। 1894 में हुई इण्डियन मेडिकल कांग्रेस में भारतीय नदियों के कीटाणु नामक शोध पत्र में स्पष्ट किया गया कि कूप जल में कीटाणु बढ़ते है, जबकि दोनों नदियों के जल में कीटाणु नष्ट होते है।

अरब यात्री 'इब्नबतूता' ने अपने यात्रा वृतान्त में लिखा है : सुल्तान मुहम्मद तुगलक के लिए दौलतबाद तक गंगा जल बराबर जाया करता था।

अब्दुल फजल अपनी 'आइने अकबरी' पुस्तक में लिखते है : बादशाह अकबर गंगा जल को अमृत समझते थे। वे पीने तथा भोजन में गंगा जल का उपयोग करते थे।

फ्रान्सीसी यात्री टवर्नियर ने अपने यात्रा विवरण में लिखा है– दिल्ली और आगरा में औरंगजेब के लिए खाने पीने के सामग्री के साथ गंगा जल भी रहता है उनकी यात्रा में भी इसका प्रबन्ध रहता है। स्वयं बादशाह औरंगजेब ही नही, दरबार के अन्य लोग भी गंगा जल को व्यवहार में लाते थें। ऊँटों पर लदा हुआ गंगा जल बराबर साथ रहता था। प्रतिदिन नाश्ते के साथ प्रातःकाल उस टवर्नियर को भी एक सुराही गंगा जल भेजा जाता था। वे यात्रा में मेवा फल मिठाई गंगाजल उसे ठण्डा करने के लिए शोरा और पान बराबर साथ रखते थे।

कैप्टेन एडवर्ड मूर ने लिखा है– *शाहनवर का नवाब केवल गंगाजल ही पीता है।*

गुलाम हुसेन ने 'रियाजू स सलातिन' नामक बंगाल के इतिहास में लिखा है कि मधुरता स्वाद और हल्केपन में गंगा जल के बराबर कोई दूसरा जल नही है। कितने ही दिनो तक रखने पर भी बिगड़ता नही है।

तिब्बती बौद्धों की दृष्टि में भी गंगाजल उपयोगी रहा है नेपाल भूटान (तिब्बत) का अन्त होने पर तिब्बत के तूशी लामा ने बंगाल के गर्वनर जनरल वारेन हेस्टिंग्स के पास एक दूत भेजकर गंगा

तट पर कुछ भूमि माँगी और वहाँ पर एक मठ बनवाया क्योंकि गंगा उनके लिए भी पवित्र है। यह मठ मंदिर मोट बागान के नाम से प्रसिद्ध है। तूशीलामा ने मोट बागान श्री पूर्णागिरि को दान कर दिया था। भारतीय संस्कृत में कुम्भ सृष्टि का प्रतीक है। कुम्भाकार पाँच तत्वों में इसकी रचना करता है उन्ही पाँच तत्वोंमें इसकी रचना करता है। उन्हीं पाँच तत्त्वों से ब्रह्मा सृष्टि की संरचना करता है–कुम्भ के बारे में कहा गया है–

> कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रूद्रे समाहिताः मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
> कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्त द्वीप वसुन्धरा ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदो सामवेदो अथर्वणः।।
> अङैगश्च संहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।।

कलश के मुख में विष्णु, कण्ड में रूद्र,मूल में ब्रह्मा मध्य में मातृण अन्तवस्था में समस्त सागर पृथ्वी में निहित सप्त द्वीप तथा चारों वेदों का समन्वयात्मक स्वरूप विद्यमान है, इस श्लोक के भी मध्य में मातृगणों के विद्यमान होने का उल्लेख है। मातृकायें 16 होती है। चन्द्रमा की भी बोडश कला होती है 1कलात्र60 विकला के होती है। दक्ष प्रजापति ने अपनी पत्नी असिवनी के गर्भ से 60 कन्यायें उत्पन्न की थी। उन्होंने 10 धर्म को, कश्यप, 29 कन्याये चन्द्रमा को, 2 भूत, 2 अंगिरा,2 वृभाश्र तथा 4 तार्क्ष्य को ब्याह दी। 27 नक्षत्र ही चन्द्रमा की पत्नियाँ हैं। सूर्य अपने परिक्रमा पथ पर एक वर्ष में 12 राशियों से होकर गुजरता है। राशि चक्र के 18^0 चौड़े पट्टे के अन्दर असंख्य तारागण है। उनमें से 29 समूह प्रमुख मान्य हैं।

> 1 राशि चक्रत्र 360 अंश, 1 राशित्र 30 अंश
> 1 नक्षत्रत्र360 / 27त्र 13 अंश 20 कला
> 1 अंशत्र60 कला, 1 कलात्र 60 विकला

कुम्भ राशि चक्र की ग्यारहवीं कड़ी है। इसका विस्तार 300^0 से लेकर 330^0 तक है। इस राशि का स्वामी शनि है। इसके बारे में शास्त्रों में मान्यता है–

> स्कन्धे तु रिक्तः पुरुषस्य सिंहो
> (कुम्भो) जघेर्य तर्याक दशमाहु रामे।
> तस्यो (शुष्को) दकाधार कुशस्य पक्षी
> स्त्री शैाण्डिको धूत निवास भूमिः।।

अपने कन्धे पर रिक्त घट रखे हुये पुरूष के समान ग्यारवहवी राशि कुम्भ हैं। काल पुरुष को पिण्डलियां इसका वास है।

शुष्क या जल के उपर कुशबाहुल्य धूमि, पक्षि, स्त्री मय बनाने वाले, जुआ के स्थान में इसका निवास है। कुम्भ भगवान विष्णु का नाम है। (विष्णु सहत्रनाम –श्लोक 87) कुम्भ शब्द चुरादि–गणीय, कृभि (कुम्भ) आच्छादने धातु में विपन्न होता है। जो आच्छादन करता है ढकता है, आवृत करता है, फेरता है उसका नाम कुम्भ है। परमात्मा अपने ऐश्वर्य से समस्त विश्व को आवृत किये रहता है। इसलिए वह भी ' कुम्भ 'है। इसे कमु कान्तै धातु से जोडने पर अमृत प्राप्ति की कामना का बोध होता है। इससे शब्दायमान होने से परिभाषित किया गया है।इसलिए कुम्भ को पेट, गर्भाशय, बह्मा, विष्णु की संज्ञा दी जाती है। लोक में कुम्भ अर्धकुम्भ पर्व पर्व के सूर्य, चन्द्रमा तथा वृहस्पति तीन ग्रह कारक है। सूर्य आत्मा है, चन्द्रमा मन है, बृहस्पति ज्ञान है। आत्मा अजर,अमर, नित्य तथा शान्त है, मन चंचल, ज्ञान मुक्ति कारक है। आत्मा में मन का लय होना, बुद्धि का स्थिर होना नित्य मुक्ति का हेतु है। ज्ञान की स्थिरता तभी सम्भव है। जब बुद्धि स्थिर हो। दैवी बुद्धि का स्थिर हो। दैवी बुद्धि का कारक गुरु है। बृहस्पति का स्थिर राशियो वृष, सिह, वृश्चिक एवं कुम्भ में होना ही बुद्धि का स्थैर्य है। चन्द्रमा का सूर्य से मुक्त होना अथवा अस्त होना ही मन पर आत्मा का वर्चस्व है। आत्मा एवं मन का संयुक्त होना स्वकल्याण के पथ पर अग्रसर होना है। कुम्भ अर्धकुम्भ को हम शरीर, पेट, समुद्र, पृथ्वी, सूर्य, विष्णु के पर्यायों से सम्बद्ध करते है पर समुद्र नदी कूप आदि नाना प्रकार की कोशिकाओं, स्नायुतंत्रों से आवृत्त रहता है, इसलिए कुम्भ इच्छा है कामवासना रूप को आवृत करने के कारण काम ब्रह्मा है। चराचर को धारण करने, उसमें प्रवृष्ट होने के कारण विष्णु स्वयं पूर्ण कुम्भ है।

ग्रहों की परिक्रमा पथ अवधि भिन्न–भिन्न है चन्द्रमा 29–1/2 दिन, बुध 88 दिन, बुध 88 दिन, शुक्र 224 दिन, सूर्य 365–1/4 दिन, मंगल 389 दिन गुरू 11–3/4 वर्ष, शनि 29–1/2 वर्ष, राहु तथा केतु 18 वर्ष में वह वक्र गति से नक्षत्र को पार करते है। सूर्य से सबसे निकट बुध है बुध के बाद शुक्र है। शुक्र के बाद पृथ्वी, पृथ्वी की कक्षा के बाद मंगल की कक्षा इसके बाद गुरू की कक्षा तथा गुरू क बाद शनि की कक्षा आती है। इस गति चक्र में सूर्य, गुरु, चन्द्र के संयोग में कुम्भ अर्ध कुम्भ की गणना की गयी है। छः राशियो का एक अयन होता है। कुल दो अयन होते है। मकर से मिथुन तक उत्तरायण तथा कर्क से धनु पर्यन्त दक्षिणायन गति का दूसरा अयन होता है। प्रयाग का कुम्भ अर्ध कुम्भ सूर्य की उत्तरायण गति में होता हैं यहाँ रवि गति की प्रधानता है मानव शरीर में मुलाधार को लेकर सहस्त्रार तक छः चक्र होते है। मानुष शरीर में पंचतत्त्व से निर्मित छठा पिण्ड होत है। काम,क्रोध, लोभ, मोह, मद, आलस्य ये छः शत्रु माने गये हैं। पंच तत्वों से निर्मित शरीर रूपी कुम्भ निहित छः शत्रुओ का संहार छः चक्रो का भेद करने के बाद संभव है। इडा–पिंगला तथा सुषुमना का मिलन स्थल आज्ञा चक्र है। इसके स्थान के बाद ही प्राणी–मोक्ष रूपी सहस्त्रार के पहुँच सकता है। यही सूर्य की स्थिति है। इन सभी चक्रो में ग्रंहों का वास हैं। ग्रहों के परिभ्रमण क्रम में शरीर में स्थित ग्रह भी प्रभावित होते रहते है।

प्रयाग संगम तट पर ब्रह्मा ने दशाश्वमेध यज्ञ अकेले बैठकर नहीं किया था निश्चय ही देवताओं तथा ऋषियों का जन समूह उस यज्ञ में अपनी अपनी हवि लेने के लिए एकत्र हुआ होगा। 'प्रयाग' अर्थात् प्र + याग यानि यज्ञों की बहुल्यता का स्थल, जहाँ अत्यधिक यज्ञ होते रहे हों। ऐसी यज्ञभूमि का नाम है–प्रयाग। किसी समय संगम से लेकर श्रृंगवेरपुर तक प्रयाग वन था। 88 हजार ऋषि –मुनियों के आश्रम थे। वाल्मीकि रायायण में प्रयाग वन की चर्चा की गई है। उस समय 20 योजन तक प्रयाग एक तपोभूमि के रूप मे जाना जाता था। यमुनापार में पर्णमुनि का आश्रम, जहाँ वर्तमान में पनासा नामक गाँव है।

ऋषियन,चित्रकूट, विन्ध्यपर्वत की श्रृंखला, गंगापार में दुर्वाषा आश्रम, पाण्डेश्वर महादेव, श्रृंगेवेरपुर तथा दुआब में कौशाम्बी एवं कड़ा तक इसका विस्तार था। प्रतिष्ठानपुर (झुँसी), अलकपुरी (अरैल), ये सभी स्थल तपोभूमि यज्ञभूमि के रूप में जाने जाते हैं। प्रयाग का अक्षयवट अपने आप में इस स्थल की प्राचीनता का प्रमाण हैं प्रलयकाल में भी जिसका क्षय नही होता, वह अक्षय वट है।

> करारविन्देन पदारविन्देन मुखारविन्देन विनिवेश्यन्तम्।
> वटस्य पत्रस्य पुटे श्यानं बालं मुकुन्दं शिरसा नमामि।।

यह वृक्ष, प्रयाग तथा त्रिवेणी, मृत एवं अमृत तत्वों से उदभूत बुद्धि एवं विश्वास की ऐसी अजस्रधारा है जिसमें अवगाहन कर प्राणी धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष चतुर्दिक पुरुषार्थ की प्राप्ति करता है। गोस्वामी तुलसीदास विरचित रामचरितमानस एक प्रमाणिक ग्रन्थ है। यदि बालकाण्ड की पंक्तियों पर गौर करे, तो प्रयाग के मेले की प्रचीनता के प्रमाण की आवश्कता न होगी।

माघ मकर गति रवि जब होई। तीरथ पतिहिं आव सब कोई।।
देव दनुज किन्नर नर श्रेनी। सादर मज्जहिं सकल त्रिवेनी।।
पूजहि माधव पद जल जाता। परसि अखयवटु हरषहिं गाता।।
भरद्वाज आश्रय अति पावन। परम रम्य मुनिवर मन भावन।।
वहाँ होई मुनि ऋषय समाजा। जाहिं जे मज्जन तीरथ राजा।।
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहि परस्पर हरि गुन गाहा।।

ब्रम्ह निरूपन धरम विधिवरनहिं तत्व विभाग।
कहहि भगति भगवंत के संजुतज्ञान विराग।।

यहिं प्रकार भरि माघ नहाहिं, पुनि सब निज निज आश्रम जाहिं।
प्रति संवत् अति होई अनंदा, मकर मज्जि गवनहिं मुनि वृंदा।।

गोस्वामी जी ने रामचरित मानस की रचना 1631 मे की है।
सवंत् सोलह सौ इकतीसा। करहु कथा हरि पद धर शीशा।।[3]

इससे पूर्व भगवान शिव ने स्वयं इसकी रचना अपने मानस में कर रखी थी। रचि महेश निज मानस राखा, पाइ सो समय शिवा सन भाषा।। स्पष्ट है कि प्रयाग का यह उत्सव अनन्त काल से चला आ रहा है। इसे प्रशासनिक व्यवस्था की परिधि में बाँध कर नहीं देखना चाहिये वेदों में प्रयाग की त्रिवेणी सित और ''असित'' ''सितासिले'' के शब्द के अधिहित है। सच पूछिये तो 'संगच्छध्व,'संवदध्व''की भावना से प्रेरित रहे हैं ये तीर्थ और मेले। इन्होंने ने ही अनेकता में एकता स्थापित करने का कार्य किया है, उस समय संचार का माध्यम रहे है। इन्हें दो प्रकार के तीर्थो में विभाजित किया गया है। प्रथम 'मौन तीर्थ' तथा दूसरा ''मानस तीर्थ''। पतित्र नदियों में स्नानादि तीर्थ मोक्ष तीर्थ माने गये हैं। इनके अलावा सत्य, क्षमा, इन्द्रियनिग्रह, भूत, प्रदत्त, दान, संतोष, प्रियवादिता, ब्रह्मचर्य, ज्ञान, धृति एवं तापस ये सभी मानस तीर्थों से युक्त व्यक्ति को मौन तीर्थ की यात्रा करने का पूर्ण फल देते रहे है।

तीर्थं हि द्विधा प्रोत्तं कामदं मोक्षदं तथा।
कामंद मोक्षदं नैव कामदं न च तथापि
सर्वतीर्थानि कामदर्नि मोक्ष दाने समर्थानि भवन्ति न।।
महाभारत के वनपर्व में कहा गया है–
ब्राह्मण क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा राजस–तमस्
न वियोर्नि व्रजन्त्येतो स्नानास्तीर्थे महात्मन।।[4]

पद्मपुराण में तीर्थराज प्रयाग को सभी तीर्थों में सर्वोपरि माना गया है। नैमिषारण्य में ऋषियों के धर्म, अर्थ काम और मोक्ष के उपाय पूछने पर सूत जी ने कुछ ऋषियों तथा सिद्धों द्वारा खोजे गये तीर्थों, काम्य, नित्यकाम्य, नैमित्तिक, पापनाशी तीर्थों का वर्णन किया है–कलियुग में जब अनेकानेक दोषों पापों से मानव की बुद्धि–विवेक शून्य हो जाती है। उसे राजसी और तामसी प्रवृतियाँ मोहपाश में बाँध लेती है, ऐसी स्थिति में तीर्थ यात्रा और भगवन्नाम ही उद्धार का सुगम मार्ग है। हे मुनिसश्वरों अन्य तीर्थ के कारण जो पाप को जाते हैं उन पापों के फल का भोग भी देवताओं द्वारा वही कराया जाता हैं बिना भोग के सप्तर्षियों में भी पापों का क्षय कभी नहीं होता। भाग्यवश यदि मनुष्य तीर्थराज में चला जाय तो केवल उसके दर्शन मात्र से ही पाप नष्ट हो जाते हैं।

कदाचिद्दौ वयोगान्ते तीर्थराजगता नराः
पापानि भस्मतामेषां भवन्तयलोकमात्रतः।।

गंगा यमुना के दर्शन से यह धरती और भी पवित्र है। इसे राजा का मान प्राप्त हैं सभी तीर्थों में विशेषकर तीर्थराज प्रयाग में आधिदैविक शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित होती है। इसलिए यहाँ प्राणियों को पूर्णतया मुक्ति प्राप्त होती है।

तीर्थराज के बारे में ब्रह्मा की शंका निवारण शेषनाग ने बड़े खंभो के तराजू द्वारा – ऋषियों, सात–पुरियों तथा सातों पर्वतों को एक–एक पलड़े पर रखकर तौल करते हैं। उन्होंने सातों समुद्रों, सात द्वीपों, सभी तीर्थों तथा नदियों को भी तुला पर रखा, पर बराबर नही रहे। बाद में सभी को एक तुला तथा सप्त पुरियों में प्रयाग को दूसरे पर रखा पलड़ा ध्रुवमण्डल की ओर चला गया ऐसा देखकर ब्रह्माजी ने प्रयाग को तीर्थो का राजा स्वीकार कर लिया। इस प्रयाग क्षेत्र के बारे में जो संन्देह करता हैं वह वेदों के बारे में भी सन्देह करता है। जिसका निश्चय इस तीर्थ में रहता हैं, उसका सर्वत्र निश्चय समझता चाहिये। जो कहता हैं इस तीर्थ में गति नहीं होती उसकी गति कभी नहीं होती और जो यहाँ मनोरथों की सिद्धि नहीं मानते, उनके मनोरथ की सिद्धि कभी भी सम्भव नहीं हैं जो यहाँ मोक्ष को नहीं मानते, उनका मोक्ष कहीं भी सम्भव नहीं है।

निष्कर्षतः जो कोई यहाँ जिस बात के लिए नही कहता, वह उसको कहीं नहीं प्राप्त कर सकता । धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष यहाँ पदार्थों को देने के लिए प्रयागराज सदा तत्पर रहते हैं। फिर भी जो यह कहते हैं कि अमुक वस्तु अप्राप्त है, उसे समझना चाहिए कि उसके लिए यह वस्तु यथार्थ में कहीं भी उपलब्ध नहीं है। प्रयाग में निवास करने वाले पापी चाहे सकाम हो या काम, धर्मपालन के साथ दान दक्षिणा करते हुये वे मोक्ष के अधिकारी होते हैं। कोई भी व्यक्ति चाहें वह जिस जाति रंग का हो, कुलीन हो अथवा अकुलीन, पण्डित हो, अज्ञानी अथवा अमीर हो या गरीब अर्थात् सभी समान रूप से फल प्राप्त करते हैं। प्रयाग के लिए काल का कोई नियम नहीं है, जो प्राणी भक्तिपूर्वक भजन करते है। उनके लिए दान एवं व्रतादि का बंधन नहीं है। यदि कोई दरिद्र अथवा गरीब है तो वह स्नान से तथा जो धनी है यदि वह कृपणता छोड़ स्वच्छ मन से दर्शन करता है, तो अवश्य फल प्राप्त करता है। इस क्षेत्र में दान करने से अन्य स्थानों के दान से लाख गुना अधिक फल प्राप्त होता है, क्योंकि–

चराचर स्वरूपो यस्तद्रवस्थिति नाशकः।
माधवो वसते यत्र स लक्ष्मीकः सदा सदा।।

यहाँ जो चराचर स्वरूपी है सृष्टि, स्थिति और विनाश करने वाले हैं, वे माधव, लक्ष्मी, के साथ प्रयाग में सदा प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं। अक्षयवट जहाँ क्षेत्र का शिरोमणि होकर विराजता है और शिवजी के तांडव से प्रसन्न होकर माधव का जहाँ मंगल वास है। जहाँ गंगा और यमुना के मध्य में गुप्त रूप से सरस्वती निवास करती हैं वहाँ ज्ञानी और अज्ञानी मनुष्य वास करते और अपने इच्छित फल को पाते है, उनके पुनर्जन्म नहीं होता।

ब्रह्माजी ने तीर्थराज के इस महात्म्य को सुनकर इन्द्रादि देवताओं को बताया तब सभी देवताओं ने प्रयाग पर ही विश्वास करने का निश्चय किया और यहाँ की पवित्र भूमि में किये गये धर्म–कर्म का

आदर करने लगे। यहा ऐसी पवित्र भूमि है कि यदि यहाँ पाप न किया गया हो तो अन्यत्र किये गये पाप यहाँ धुल जाते हैं। प्रजापति ब्रह्मा ने सृष्टि करने के लिए यहीं यज्ञ किये थे–

> इत्मेव महायज्ञे सृष्टि कामः प्रजापतिः आवाम–सृष्टि सामप्यं ततः।
> सृष्टि ससर्ज हरा उषित्वा चात्र वास्मासान स्नात्ववै यां यथेच्छतः।।
> त्रिपुरपातयामास एक वाणेन शंकर। अस्मिस्तीर्थ भारद्वाजः षष्टयां वै सप्तमो भवत्।।

ब्रह्मा को जब शक्ति मिली तो प्रजा की सृष्टि की। शिवजी ने त्रिपुरासुर के वध के लिए यहीं निवास किया। यही नहीं नारायण ने सुन्दर स्त्री पाने की लालसा से स्नान किया था और समुद्र मंथन में लक्ष्मी को प्राप्त किया, उर्वशी ने अपने प्रियतम पुरुरवा के साथ स्नान किया, और पुनः स्वर्ग मिला। इन्द्र भी स्नान करने से कुबेर के स्वामी हो गये। भारद्वाज ने तपस्या करके सप्त ऋषियों में स्थान ग्रहण किया। इस प्रकार प्रयाग क्षेत्र में असंख्य ने सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त की है।

मत्स्यपुराण में प्रयाग माहात्म्य का विस्तृत विवेचन किया गया है। ऋषि मारकण्डेय ने युधिष्ठिर को ज्ञान का उपदेश देते हुए प्रयाग को मोह–माया से निवृत्ति का साधन बताया है। उन्होनें जहाँ तीर्थसेवन का फल निरूपित किया है, वही प्रयाग मे माहात्म्य को सर्वश्रेष्ठ बताया है। ऐसी मान्यता है कि बिना यज्ञ के दान साध्य विनियोग तथा बिना तपस्या के तीर्थ सेवा मात्र से प्राणियों को छुटकारा प्राप्त हो जाता है। मोह, ज्ञान के बिना भी होता है और उसकी उत्पत्ति का मूल पाप है। इसलिए सभी प्रकार के तीर्थों का सेवन एवं पूजा करनी करनी चाहिए। तीर्थराज प्रयाग सम्पूर्ण वेदों में प्रशंसित ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवताओं तथा ज्ञानी ऋषि मुनियों द्वारा इच्छित ऐसा स्थान है जहाँ जाने पर सारे संकट स्वयमेव दूर हो जाते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची–

1. चरकसूत्र–27/210
2. बाणभट्ट–अष्टांगहृदयम्
3. रामचरितमानस–गोस्वामी तुलसीदास
4. पद्मपुराण–वनपर्व–80–51